JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आयुर्वेद के अध्ययन में पुरातत्त्व विषय की उपयोगिता– एक अध्ययन

[1]पुष्कर रवि [2]प्रो० कामेश्वर नाथ सिंह

[1]शोध छात्र [2]आचार्य

रचना शारीर विभाग
आयुर्वेद संकाय, आई०एम०एस, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सारः प्रस्तुत अध्ययन में प्राचीन भारतीय चिकित्सा प्रणाली अर्थात **'आयुर्वेद'** के अध्ययन में **'पुरातत्त्व'** की उपयोगिता का पुनरावलोकन किया गया है, जिससे आयुर्वेद के इतिहास को जानने हेतु विभिन्न पुरातात्त्विक विधियों एवं पद्धतियों की सहायता से आयुर्वेदिक इतिहास को प्रमाणित रुप से प्रस्तुत किया जा सके। इसके लिए विभिन्न पुस्तकों, लेखों एवं इंटरनेट पर प्राप्त प्राचीन भारतीय चिकित्सा संबंधी पुरातात्त्विक साक्ष्यों का अवलोकन एवं उनके प्राप्ति में प्रयुक्त पुरातात्त्विक विधियों का विश्लेषण किया गया है। इन पुरातात्त्विक साक्ष्यों की समयावधि प्रागैतिहासिक काल से आयुर्वेद के सहिंता काल (600 इस्वी) तक रखी गई है।

भूमिका

पुरातत्त्व दो शब्दों के सहयोग से मिलकर बना है– पुरा **(प्राचीन) + तत्व (सामग्री)**, अर्थात प्राचीन सामग्रियों का अध्ययन पुरातत्त्व है। भारतीय पुरातत्त्व के पितामह, **'प्रोफेसर एच.डी सांकालिया'** के अनुसार **'पुरातत्त्व मुख्यतः प्राचीन अवशेषों का अध्ययन है'।** मानव इतिहास से जुड़ा हर वस्तु विषय अध्ययन किए जाने योग्य है एवं पुरातत्त्व, इतिहास के पुनर्मूल्यांकन हेतु प्रमाण प्रस्तुत करने का साधन है। पुरातत्त्व की सहायता से हम मानव संस्कृति से जुड़े ऐतिहासिक तथ्यों का अध्ययन करते हैं। मानव द्वारा प्रयुक्त सामग्रियाँ, जिवाश्म, अवशेष तथा विविध कलाकृतियाँ आदि विभिन्न संस्कृतियों के उदय विकास एवं पतन के इतिहास का पूर्नमूल्यांकन करने में सहायता प्रदान करती हैं। पुरातात्त्विक अध्ययनों में प्रागैतिहासिक काल से ही विभिन्न संस्कृतियों में शारीरिक विकारों के उपचार का प्रमाण देखने को मिलता है, जिसमें स्पेन के एल.सिड्रोन में मिले **निएंडर्थल मानवों** के जीवाश्म से स्वयं के चिकित्सा के लिए वनस्पतियों के प्रयोग का साक्ष्य प्रमुख है। **कार्बन डेटिंग विधि** से इसकी तिथि **47300–50600 वर्ष पूर्व** ज्ञात की गई है। इसके अतिरिक्त विश्व की अनेकों संस्कृतियों से प्राप्त कलात्मक अभिव्यक्तियों की सहायता से भी विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों तथा रचना शारीर विज्ञान के विकास के क्रम का प्रमाण मिलता है। पुरातत्त्व के अंतर्गत **पुरा–रोगविज्ञान** एवं **पुरा–वनस्पति विज्ञान** की सहायता से मानव संस्कृति में रोग एवं उसके उपचार के लिए प्रयुक्त विभिन्न वनस्पतियों के उपयोग के इतिहास का अध्ययन किया जाता है।

संस्कृति एवं उससे जुड़े विभिन्न क्रियाकलापों का विकास एक सतत् प्रक्रिया है एवं पुरातत्त्व, प्राप्त साक्ष्यों की सहायता से उन्हीं क्रियाकलापों के विकास का ऐतिहासिक पुनर्मूल्यांकन करने में सहायता प्रदान करता है। मनुष्यों ने स्वयं की उत्पत्ति की जिज्ञासा में एवं शारीरिक विकारों को दूर करने हेतु विभिन्न चिकित्सकीय क्रियाओं का प्रयोग किया। **'महर्षि चरक'**के अनुसार**'चिकित्सा शास्त्र का इतिहास भी उतना ही पुराना है जितना कि मनुष्य का अस्तित्व'।**'चरक' के अनुसार **'आयुर्वेद जीवन का विज्ञान है'**, जो कि हमेशा से ही अस्तित्व में रहा है एवं समय–समय पर विभिन्न संस्कृतियों में लोगों ने इसे अपने तरीके से समझा है। **चरक संहिता** में आयुर्वेद की परिभाषा इस प्रकार दी गई है–

हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते।। (च.सू 1/40)

'वह विज्ञान जिसके द्वारा जीवन के हित–अहित, सुख–दुख, पथ्य–अपथ्य, आयु के प्रमाण एवं लक्षण (प्रकृति) का ज्ञान होता है, वह आयुर्वेद कहलाता है'। आयुर्वेद भारतीय संस्कृति का एक अमूल्य धरोहर है अतः आयुर्वेद के ऐतिहासिक अध्ययन में पुरातत्व अत्यंत विशिष्ट उपयोगिता सिद्ध करने की संभावना रखता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्वः

भारत विश्व को आयुर्वेद जैसी अति विशिष्ट चिकित्सा प्रणाली देने के बाद भी विश्व पटल पर अपनी मूल चिकित्सा प्रणाली के प्रचार–प्रसार में आशा के अनुरूप सफल नहीं हो सका है। किसी भी वस्तु विषय पर किया गया एक पुरातात्त्विक अध्ययन उनकेऐतिहासिक तथ्यों को प्रमाणिकता प्रदान कराता है जिससे इतिहास लेखन वैज्ञानिक हो जाता है एवं विश्व पटल पर राष्ट्र के गौरवपूर्ण एवं समृद्ध इतिहास को उचित सम्मान मिलता है। पुरातत्त्व इतिहास के पुनर्मूल्यांकन का वैज्ञानिक माध्यम है अतः इससे आयुर्वेद के इतिहास संबंधित तथ्यों को प्रमाणित करने में सहायता प्राप्त होगी।

प्राचीन भारत में चिकित्सा पद्धति का इतिहास–

*प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धति अर्थात आयुर्वेद के अंतर्गत– औषधीय चिकित्सा, रचना शारीर विज्ञान तथा शल्य चिकित्सा प्रमुख रूप से सम्मिलित हैं तथा भारत में सभ्यता के आरंभ से ही इसके प्रमाण दृष्टिगोचर होने लगते हैं। पुरातात्त्विक अध्ययनों द्वारा प्रागैतिहासिक काल से अनवरत चले आ रहे भारतीय चिकित्सा प्रणाली के क्रमबद्ध इतिहास का प्रस्तुतिकरण होता है और इस तथ्य को बल मिलता है कि भारत विश्व में चिकित्सा विज्ञान के अंकुरण का प्राथमिक स्थल है। पुरातत्त्व के अंतर्गत मानव इतिहास को तीन भागों में विभाजित किया गया है – **प्रागैतिहासिक काल**, **आद्य ऐतिहासिक काल** तथा **ऐतिहासिक काल**। प्रस्तुत लेख में भारत से प्राप्त निम्नलिखित कालों एवं उससे जुड़े पुरातत्त्विक स्थलों से प्राप्त चिकित्सीय साक्ष्यों के उल्लेख प्रस्तुत किये गये हैं।*

प्रागैतिहासिक साक्ष्य–

यह काल मानव के उदय के लिए जाना जाता है। मानवों के उद्भव से लेकर लिपि के प्रथम प्रयोग से पहले तक का काल प्रागैतिहासिक काल के अंतर्गत आता है। जब मानव घुमन्तू और आखेटक था। प्रागैतिहास मानव इतिहास का वह भाग है जिसके प्राथमिक साहित्यिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं होते हैं, क्योंकि इस काल में मानव ने लिखने की कला नहीं सीखी थी अथवा उन्हें भाषा का ज्ञान नहीं था। इस काल के पुनर्मूल्यांकन के लिए विभिन्न पुरातात्त्विक साक्ष्यों की सहायता ली जाती है।

*मध्यप्रदेश के **भीमबेटका की गुफा** से अनेकों उच्चपुरापाषाणिक एवं मध्यपाषाण **(40,000–14,000 वर्ष– पूर्व)** काल के **शैल–चित्र** प्राप्त हुए हैं। **'एर्विन न्यूमेयर'** की **पुस्तक लाइन्स ऑन स्टोन (1993)** में भीमबेटका के उच्च एवं मध्यपाषाणिक शैल चित्रों का वर्णन किया गया है। भीमबेटका से प्राप्त **गर्भस्थ पशुओं के चित्रों** से यह ज्ञात होता है कि उच्च एवं मध्य पाषाणिक मानवों को शरीर में गर्भ की स्थिति एवं उसके महत्व का ज्ञान होने लगा था। रचना शारीर विज्ञान के विकास के दृष्टिकोण से यह गर्भ शारीर विषय का प्रारंभिक एवं महत्वपूर्ण साक्ष्य है। सन् 1979 में **'बी.डी मिश्रा एवं जे.एन पाल'** द्वारा उत्खनित उत्तर प्रदेश के **महदहा** से हिरण सिगों से बने **कर्ण आभूषण** युक्त कंकालों की प्राप्ति हुई है; यह कर्ण–भेदन के लिए **शल्यक्रिया** का महत्वपूर्ण प्रमाण है।*

***मेहरगढ़** से प्राप्त **7500 से 9000** वर्ष पूर्व **दांतों की सड़न** को रोकने हेतु फ्लिंट उपकरण द्वारा ड्रिलिंग प्रक्रिया का प्रमाण **नवपाषाण कालीन संस्कृति में दंत चिकित्सा** एवं इससे संबंधित उपकरणों के संबंध में प्रमाण प्रस्तुत करता है तथा **कश्मीर के बुर्जहोम** में हुए उत्खनन द्वारा प्राप्त नवपाषाण काल के द्वितीय चरण **(4300–4000 वर्ष पूर्व)** के नर कंकालो पर हुए **कपाल क्रिया** का साक्ष्य भी प्रागैतिहासिक भारत में शल्य चिकित्सा के आरंभिक विकास का प्रमाण प्रस्तुत करता है।*

आद्य ऐतिहासिक काल–

*आद्य ऐतिहासिक काल मानव इतिहास का वह समय है जब मानव ने लिखने की कला सीख ली थी परंतु अभी तक उस भाषा को पढ़ा नहीं जा सका है। समान्यतः भारत में **सिंधु–सारस्वत सभ्यता** को इस काल के अंतर्गत रखा जाता है। पुरातात्त्विक अध्ययनों की सहायता से इस सभ्यता की कालावधी **7000 ईसा पूर्व से 1200 ईसा पूर्व** निर्धारित की गई है। सिंधु–सारस्वत सभ्यता भारत की पहली नगरीय सभ्यता के रूप में जानी जाती है; जिसने शहरी सभ्यता होने की सभी कसौटियों पर खुद को खरा साबित किया था। इस सभ्यता में व्यापार, विज्ञान, बेहतरीन नगरीय योजना तथा एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य सुविधा संपन्न व्यवस्था की उपस्थिति थी। इस सभ्यता से जुड़े विभिन्न पुरातात्त्विक स्थलों से सभ्यता के निवासियों में औषधीय चिकित्सा, रचना शारीर, तथा शल्य चिकित्सा के विधिवत ज्ञान के प्रसार का प्रमाण दृष्टिगोचर होता है। **राजस्थान के कालीबंगा** से प्राप्त एक बच्चे के कंकाल पर कपाल क्रिया का प्रमाण प्राप्त होता है जिसके कपाल में छः वृत्ताकार छेद पाए गए हैं जोकि निसंदेह उसके जीवित अवस्था में ही बनाए गए होंगे क्योंकि बाद में यह चिकना हो गया है। यह उस समय के उत्कृष्ट चिकित्सा प्रणाली पर प्रकाश डालता है। सिर दर्द एवं मस्तिष्क की अन्य*

बीमारियों में इस प्रकार का उपचार 3000 वर्ष–पूर्व में यूरोप तथा मध्य अमेरिका में पेरू की कुछ जनजातियों में किया जाता था। इस प्रकार के कपाल क्रिया के साक्ष्य कालांतर में वैदिक साहित्य से भी प्राप्त होते हैं।

रचना शारीर विषय की दृष्टि से भी सिंधु–सारस्वत सभ्यता में कुछ प्रमाण मिले हैं, उदाहरणतः – वर्तमान के पाकिस्तान में मोहनजोदड़ो से उत्खनन से प्राप्त शवाधान जिसमें नवजात शिशुओं को मृत्यु उपरांत **भ्रूणावस्था** में ही दफनाए जाने का साक्ष्य मिलता है जो कि हड़प्पा वासियों के गर्भ शारीर विज्ञान से अवगत होने का भी प्रमाण प्रस्तुत करता है।

ऐतिहासिक काल–

ऐतिहासिक काल वह समय है जिसके साहित्यिक साक्ष्य पांडुलिपियों तथा विभिन्न अभिलेखों के रूप में उपलब्ध हैं। ऐतिहासिक काल का आरंभ वैदिक युग से होता है इसके लिखित साक्ष्यों को **1500–1000 ईसा पूर्व** का माना जाता है। वैदिक युग के आरंभ से सांस्कृतिक विकास के विभिन्न आयामों के साथ ही चिकित्सा प्रणाली के विकास की गति में भी तीव्रता आई। वैदिक साहित्य के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इस काल के निवासियों को भारतीय चिकित्सा प्रणाली के विभिन्न विषयों का विधिवत ज्ञान होने लगा था। वैदिक साहित्य में रचना शारीर, औषधीय चिकित्सा, शल्य चिकित्सा तथा शारीरिक विकारों को दूर करने हेतु विभिन्न पद्धतियों का उल्लेख देखने को मिलता है। चारों वेद, क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद में चिकित्सा के विभिन्न अंगों का वर्णन है। ऋग्वेद में वर्णन मिलता है कि एक बार युद्ध में राजा खेल की पत्नी विश्पला की दोनों टांगे कट गईं, तब व्यतिरिक्त शल्यक्रिया **(prosthetic surgery)** के माध्यम से उसके शरीर में दोनों कृत्रिम टांगे प्रत्यारोपित की गई थीं। यह शल्य क्रिया द्वारा अंग प्रत्यारोपण का पहला उदाहरण है। वेदों में बहुत स्थानों पर बच्चों के प्रसव की प्रक्रिया, दहन क्रिया **(cauterisation)**,जीवविष **(toxins)**, रसायन–चिकित्सा, वाजीकरण **(aphrodisiac)**, का वर्णन भी मिलता है। आयुर्वेद के दृष्टिकोण से अथर्ववेद का अत्यंत महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट स्थान है। इसमें असंख्य जड़ी बूटियों, वनस्पति विद्या द्वारा गंभीर रोगों का निदान, शल्य चिकित्सा कृमियों के उत्पन्न होने वाली जगह तथा प्रजनन संबंधी विषयों पर चर्चा की गई है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि **अथर्ववेद** आयुर्वेद का मौलिक ग्रंथ है।

वेदों की रचनाओं के उपरांत **1400–800 ईसा पूर्व** के मध्य उपनिषदों की रचना हुई। उपनिषद वेदों का ही विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करते हैं जिनमें अन्य शिक्षाओं के साथ–साथ हमें चिकित्सा तथा शारीरिक संरचना से संबंधित वर्णन देखने को मिलते हैं। **गर्भोपनिषद,** जिसकी रचना **1400 ईसा पूर्व** मानी जाती है, में गर्भ में निर्माण के विभिन्न चरणों का विस्तार से वर्णन किया गया है। गर्भोपनिषद के अनुसार **गर्भ का निर्माण रक्त एवं वीर्य का संयुग्मन होने से होता है।** सूक्ष्मदर्शी उपकरणों के निर्माण के पूर्व गर्भ निर्माण के विभिन्न चरणों का वर्णन आश्चर्यजनक प्रतीत होता है।इसके उपरांत 800 ईसा पूर्व से 1000 ईस्वी तक के समय को आयुर्वेद का स्वर्णकाल कहा जाता है। आयुर्वेद के इतिहास में इसे सहिंता काल की संज्ञा दी जाती है; जिसमें विभिन्न विद्वानों द्वारा चिकित्सकीय प्रक्रिया के ऊपर ग्रंथ लिखे गए। इस काल क्रम में **जीवक(500ईसा–पूर्व), चरक(200–300ईसा–पूर्व) सुश्रुत(200 ईसा–पूर्व), तथा वाग्भट(500–600ईस्वी) प्रमुख हैं।**
पुरातात्त्विक उत्खनन से महाजनपद काल के प्रसिद्ध चिकित्सक जीवक से संबंधित पुरातात्त्विक स्थल **तक्षशिला** से अनेकों शल्य क्रम में उपयोगी उपकरणों की प्राप्ति हुई है तथा सुश्रुत से संबंधित **वाराणसी** से भी अनेकों **लौह निर्मित शल्य कर्म उपयोगी उपकरणों** की भी प्राप्ति हुई है। पुरातात्त्विक दृष्टिकोण से प्राचीन भारत में चिकित्सकीय विकास के अध्ययन के लिए यह उपकरण अत्यंत महत्वपूर्ण साक्ष्य हैं।

साक्ष्य संग्रहण हेतु विभिन्न पुरातात्त्विक विधियों का प्रयोग–

इतिहास के पुनर्मूल्यांकन के लिए आवश्यक ऐतिहासिक साक्ष्यों का तिथिकरण, संरक्षण तथा परिरक्षण हेतु पुरातत्त्व के विभिन्न वैज्ञानिक विधियों की सहायता ली जाती है। प्रस्तुत लेख में आयुर्वेद के ऐतिहासिक अध्ययन में उपयोगी पुरातात्त्विक विधियों का विष्लेशण गया है।
कार्बन डेटिंग विधि– जैविक अवशेषों के तिथि निर्धारण के लिए सामान्यतः कार्बन डेटिंग विधि **(c14)** की सहायता ली जाती है। नोबेल पुरस्कार विजेता **'विलियर्ड एफ. लिबि'** ने 1949 में इस विधि का आविष्कार किया था। इस विधि में कार्बन (c14) के विघटन को माप कर किसी पदार्थ की तिथि निकाली जाती है। (c14) का विघटन एक निश्चित दर से होता है और लगभग 5500 वर्षो में (c14) की एक निश्चित इकाई के आधे भाग की विघटन प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है। इस विधि के आविष्कारक लिबि के अनुसार (c14) का अर्धजीवन का समय **5568 ± 30** वर्ष माना गया था **परंतु एच. गुडविन** ने अपने शोध के आधार पर इसे **5730 ± 40 वर्ष** निर्धारित किया। शैल चित्रों में प्रयुक्त जैविक रंग, मानव जीवाश्म आदि सभी जैविक अवशेष जिनमें कार्बन की मात्रा उपलब्ध होती है, का तिथि निर्धारण इस विधि द्वारा किया जाता है। **स्तरीकरण**– स्तरीकरण प्रविधि की नींव **'पिट रिवर्स'** द्वारा 1835 में रखी गई तथा भारत में इस विधि का प्रथम प्रयोग **'मॉर्टिमर व्हिलर'** ने किया। पृथ्वी के स्तरों के निश्चित अनुक्रम को स्तर कहते हैं; जिनका निर्माण प्रकृति या मानव द्वारा होता है। पुरातत्त्व की दृष्टि में मनुष्य द्वारा निर्मित स्तरों का अत्यधिक महत्व है जिन्हें पुरातात्त्विक स्तर कहा जाता है; जिनमें से कुछ अनुक्रम में होते हैं तो कुछ समय अंतराल में निर्मित होते हैं जिन्हें उत्खनन के समय अलग–अलग पहचाना और चिन्हित किया जाता है। भिन्न स्तरों से प्राप्त एक ही प्रकार के अवशेषों को एक ही काल का मान लेना

अथवा एक स्तर से प्राप्त विभिन्न वस्तुओं को एक ही काल का मान लेना स्वाभाविक है। यदि किसी एक का तिथि निर्धारण निर्पेक्ष विधियों द्वारा किया जा सके तो शेष स्थानों की तिथि का अनुमान करना भी संभव हो जाएगा। तक्षशिला तथा वाराणसी से प्राप्त शल्य उपकरणों का तिथिकरण इसी विधि द्वारा निर्धारित किया गया था।

संरक्षण एवं परिरक्षण–

किसी पुरास्थल का उत्खनन करके उत्खनन स्थल से एतिहासिक साक्ष्यों की खोज की जाती है। यह अवशेष रूपी साक्ष्य मिट्टी के भीतर दबे रहने पर वर्षों तक अपने वर्तमान स्वरूप में सुरक्षित रह सकते हैं। किंतु उत्खनन से उन्हें प्रकाश मिलने के बाद उनका संरक्षण एवं परिरक्षण अत्यंत आवश्यक हो जाता है। पुरावशेष जिस भी अवस्था में प्राप्त हुए हों उन्हें यथावत अवस्था में सुरक्षित रखना अनिवार्य है। आयुर्वेद के ऐतिहासिक अध्ययन के लिए प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेषों का संरक्षण एवं परिरक्षण इनके दीर्घ कालिक अध्ययनों के लिए अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि शल्य उपकरणों, साहित्यिक पांडुलिपियों इत्यादि साक्ष्यों को अगली पीढ़ी के लिए सुरक्षित रखना हम सबका नैतिक कर्तव्य है। अतः आयुर्वेद के अध्ययन में पुरातत्त्व द्वारा प्रदत्त संरक्षण एवं परिरक्षण की विधियों की उपयोगिता अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

पुरातात्त्विक विधियों का प्रयोग कर ना केवल साक्ष्यों का एतिहासिक पुर्नमुल्यांकन किया जा सकता है बल्कि उनकी निर्माण विधि तथा तत्कालीन सामाजिक परिवेश एवं धातुविज्ञान अथवा विज्ञान के विविध आयामों पर अध्ययन किया जा सकता है।

निष्कर्ष–

आयुर्वेद के ऐतिहासिक अध्ययन में पुरातत्त्व विषय की उपयोगिता के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण करने पर निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि संस्कृति के विभिन्न आयामों में विज्ञान के अलग–अलग विभागों के उद्भव एवं विकास के क्रम का अध्ययन भी अत्यंत आवश्यक है। संस्कृति के निर्माण में चिकित्सा शास्त्र अपना विशिष्ट स्थान रखता है तथा एक उन्नत चिकित्सा प्रणाली से संपन्न सभ्यता एक स्वस्थ समाज का निर्माण करती है जिससे अन्य क्षेत्रों में भी विकास करना सहज हो जाता है। भारत की पहली नगरीय सभ्यता माने जाने वाली सिंधु–सारस्वत संस्कृति तथा 600 शताब्दी ईसा पूर्व की दूसरी नगर क्रांति एक स्वस्थ समाज का ही परिणाम थी। स्वच्छता की आवश्यकता एवं इसके लिए विशेष सुविधाएं भी इस बात का प्रमाण हैं कि समाज मनुष्य शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए स्वच्छता के महत्व को विशेष रूप से जानता है। सिंधु–सारस्वत एवं महाजनपद कालीन संस्कृति (600 ईसा पूर्व) में विशेष रूप से यह देखने को मिलता है। भारत प्रागैतिहासिक काल से अनवरत चिकित्सा क्षेत्र में विकास करता रहा है एवं भारत इसके परिणाम स्वरूप विश्व को आयुर्वेद जैसी एक उन्नत चिकित्सा पद्धति देने में सफल हो सका है। भारतीय चिकित्सा पद्धति में विकास क्रम को पुरातात्त्विक अध्ययनों की सहायता से प्रस्तुत करने पर आयुर्वेद के इतिहास का वस्तुनिष्ठ पुनर्मूल्यांकन करने में निश्चित रूप से सहायता प्राप्त होती है।

निसंदेह ही भारत में शैलाश्रयों में पाए गए रचना शारीर संबंधित चित्रों से लेकर आयुर्वेद के उद्भव का विकास क्रम अत्यंत रोचक एवं ज्ञानवर्धक है। आयुर्वेद के ऐतिहासिक अध्ययन में पुरातात्त्विक विधियों के प्रयोग से आयुर्वेदिक इतिहास को प्रमाणित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

संदर्भ सूचि–

1.सुश्रुत सहिंता।

2.चरक संहिता।

3.गोयल, एस. (2008). प्रागैतिहासिक मानव एवं संस्कृतियाँ. वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकाशन/ पृष्ठ सं. 55

4.वर्मा, आर. के. (2016). भारत की प्रस्तर युगीन संस्कृतियाँ. प्रयागराजः परम ज्योति प्रकाशन/पृष्ठ सं. 301.

5.http://antiquity.ac.uk/ant/087/ant0870873.htm

6-BRITISH DENTAL JOURNAL VOLUME 200 NO. 8 APR 22 2006 (pg. no. 425).

7-Sankhyan A. R., Weber george H.J., 2001, evidence of Surgery in Ancient India:Trepanation at Burzahom (Kashmir) over4000 Years Ago, int. Journal of osteoarcheology(375-380) DOI: 10.1002/oa. 579

8. वैद्य, बी.डी., और गुप्ता, के.के. आयुर्वेद का सैधान्तिक अध्ययन. नई दिल्लीः कॉन्सेप्ट पब्लिषिंग कम्पनी/पृष्ठ सं. 35

9. शुक्ला, वी. , और त्रिपाठी, आर. डी.(2016). आयुर्वेद का इतिहास एवं परिचय. वाराणसीः

10. शुक्ला, वी. , और त्रिपाठी, आर. डी.(2016). आयुर्वेद का इतिहास एवं परिचय. वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान/पृष्ठ सं. 154

*11.*Neumayer, E. (1993). Lenes On Stone-The Prehistoric Rock Art Of India. New Delhi: Manohar Publishers & Distributors.

*12.*Verma, R.K. (2012). Rock Art Of Central India- North Vindhya Region. New Delhi: Aryan Books International

*13*http://www.kamat.com/kalranga/rockpain/betaka.html.

14. शर्मा, पी. वी. (1975). आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास. वाराणसीः चौखम्बा ओरियंटालिया।